

राजस्थान उच्च न्यायालय

जयपुर बेंच

एस.बी. आपराधिक विविध याचिका संख्या 4109/2023

सिमरा फूड्स प्राइवेट लिमिटेड, इसके निदेशक प्रवीण सतपाल जैन, पुत्र श्री सतपाल जैन, आयु लगभग 73 वर्ष, पता - बी-1/7, नारायण पुजारी नगर, ए.जी. खान रोड, वर्ली, मुंबई-400018।

-----याचिकाकर्ता

बनाम

1. राजस्थान राज्य, पी.पी. के माध्यम से
2. एम/एस एम.एस. एग्री प्रोपराइटरशिप फर्म, मध्यस्थ प्रितेश महेश्वरी, पुत्र स्व. श्री श्याम महेश्वरी, पता - बी-106, श्रीकांत पर्व, कालिदास मार्ग, बाणिपार्क, जयपुर (पश्चिम), राजस्थान।

-----प्रतिवादी

याचिकाकर्ता(ओं) के लिए : श्री कपिल गुप्ता के साथ
श्री अजय गढवाल
श्री आर.एस. सिंसिनवार
श्री चित्रांश सक्सेना
श्री विपुल ओझा
सुश्री अनीशा यादव
सुश्री निधि शर्मा
श्री धर्मेन्द्र बैरवा
श्री आदर्श सिंघल

प्रतिवादी(ओं) के लिए : श्री महेन्द्र मीणा, पीपी
श्री हेमंत नाहटा के साथ
श्री नरेश शर्मा, अभियोजक की ओर से।

माननीय श्री. जस्टिस अनिल कुमार उपमन

फैसला

उच्चारण तिथि :-

10/05/2024

(रिपोर्टबल)

1. यह विविध याचिका दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत आरोपी याचिकाकर्ता की ओर से प्रस्तुत की गई है, जिसमें पुलिस थाना बनिपार्क, जयपुर (पश्चिम) में दर्ज एफ.आई.आर. संख्या 239/2022 को रद्द करने की मांग की गई है, जो कि भारतीय दण्ड संहिता की धाराओं 409, 420, 468, 471 एवं 120बी के तहत पंजीकृत है।

2. संक्षिप्त तथ्यों में, शिकायतकर्ता-प्रतिवादी संख्या 2 ने दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 156(3) के तहत, महानगरी मजिस्ट्रेट संख्या 7, जयपुर मेट्रो-2 के समक्ष शिकायत प्रस्तुत की, जिसमें आरोप था कि याचिकाकर्ता ने प्रोफार्मा इनवॉयस उठाकर अग्रिम भुगतान के आधार पर सामग्री की आपूर्ति का प्रलोभन देकर शिकायतकर्ता से सामग्री दिलवाई। शिकायत में यह आरोपित किया गया है कि शिकायतकर्ता ने अग्रिम राशि का भुगतान किया, लेकिन न तो याचिकाकर्ता ने सामग्री की आपूर्ति की और न ही अग्रिम राशि लौटाई। शिकायतकर्ता ने यह भी आरोप लगाया कि याचिकाकर्ता ने खातों की पुस्तकों में फर्जी प्रविष्टियां कीं और उसकी राशि का दुरुपयोग किया। ट्रायल कोर्ट ने मामले को पुलिस थाना बनिपार्क, जयपुर को जाँच हेतु भेजा, जिस पर आक्षेपित एफ.आई.आर. संख्या 239/2022 दर्ज की गई, जिसमें आरोपी याचिकाकर्ता के विरुद्ध

भारतीय दण्ड संहिता की धाराओं 409, 420, 468, 471 एवं 120 बी के तहत अपराध पंजीबद्ध किया गया।

3. आरोपी याचिकाकर्ता के विद्वान वकील का तर्क है कि आरोपित प्राथमिकी झूठे और मनगढ़ंत तथ्यों पर आधारित है। उनका कहना है कि याचिकाकर्ता और शिकायतकर्ता दोनों ही दालों और चने आदि के व्यवसाय से जुड़े हैं। शिकायतकर्ता, मेसर्स वर्धमान कमर्शियल, मुंबई के मालिक वर्धमान मेहता और मेसर्स प्रकाश एग्रो कमोडिटी के माध्यम से याचिकाकर्ता के साथ अपना व्यवसाय संचालित कर रहा था। उनका कहना है कि शिकायतकर्ता ने 2018 से 2021 की अवधि के दौरान की गई बिक्री, खरीद, रसीद और भुगतान का विवरण छिपाते हुए यह प्राथमिकी दर्ज कराई है। उपरोक्त अवधि के दौरान, शिकायतकर्ता ने करोड़ों रुपये का कारोबार किया है, लेकिन आश्चर्यजनक रूप से, प्राथमिकी में आरोप लगाया गया है कि याचिकाकर्ता ने वर्ष 2017 में हुए लेन-देन का भुगतान नहीं किया है, वह भी पांच साल से अधिक की अत्यधिक देरी के बाद, वर्ष 2022 में। वास्तव में, शिकायतकर्ता ने श्री वर्धमान मेहता के साथ मिलकर एक षड्यंत्र रचा और लेखा-पुस्तकों में जाली प्रविष्टियाँ कीं और लेखापरीक्षा के दौरान, जब यह तथ्य याचिकाकर्ता के संज्ञान में आया, तो उसने आर्थिक अपराध शाखा ('ईओडब्ल्यू') मुंबई में एक शिकायत दर्ज कराई और जवाब में, शिकायतकर्ता ने यह प्राथमिकी दर्ज कराई। यह भी तर्क दिया गया है कि यही शिकायत श्री वर्धमान मेहता ने आर्थिक अपराध शाखा, मुंबई में दर्ज कराई थी, जिसमें प्रारंभिक जाँच के बाद, ईओडब्ल्यू ने इसे "सिविल प्रकृति" का विवाद मानते हुए श्री वर्धमान की शिकायत दर्ज की थी। इस तर्क के समर्थन में, वह इस न्यायालय का ध्यान वरिष्ठ पुलिस निरीक्षक, आर्थिक अपराध शाखा यूनिटी-VI

(जीसी-4), मुंबई द्वारा श्री वर्धमान मेहता को दिनांक 05.09.2023 को भेजे गए पत्र की प्रति की ओर आकर्षित करते हैं।

4. इस प्रकार, विद्वान अधिवक्ता का तर्क है कि आरोपित प्राथमिकी कानून की प्रक्रिया का सरासर दुरुपयोग है और यह याचिकाकर्ता द्वारा आर्थिक अपराध शाखा ईओडब्ल्यू के समक्ष शिकायतकर्ता के विरुद्ध की गई कार्रवाई के जवाब में, याचिकाकर्ता को परेशान करने और अपमानित करने के उद्देश्य से दर्ज की गई है। विद्वान अधिवक्ता ने आगे तर्क दिया कि आरोपित प्राथमिकी दर्ज होने के बाद, याचिकाकर्ता कंपनी को पुलिस स्टेशन बनीपार्क, जयपुर से नोटिस प्राप्त हुआ और याचिकाकर्ता ने उक्त नोटिस में उल्लिखित प्रत्येक आरोप का विस्तृत और विशिष्ट उत्तर दिया। वैकल्पिक रूप से, उनका तर्क है कि तर्क के लिए भी, यदि शिकायतकर्ता द्वारा प्राथमिकी में बताई गई कहानी को सत्य मान लिया जाए, तो भी याचिकाकर्ता के विरुद्ध कोई अपराध नहीं बनता है और यह व्यावसायिक लेनदेन से उत्पन्न एक दीवानी प्रकृति का विवाद होगा। विद्वान अधिवक्ता का तर्क है कि प्राथमिकी में लगाए गए आरोप अनुबंध का उल्लंघन हो सकते हैं, जिसके लिए आरोपित प्राथमिकी के माध्यम से आपराधिक कार्यवाही शुरू करना कानून की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा। उन्होंने निम्नलिखित निर्णयों पर भरोसा किया है:-

- (i). सचिन गर्ग बनाम स्टेट ऑफ यूपी एवं अन्य, (2024) 2 सुप्रीम 73 में प्रकाशित
- (ii). परमजीत बत्रा बनाम स्टेट ऑफ उत्तराखंड, (2013) 11 एससीसी 673 में प्रकाशित

(iii). मोहम्मद इब्राहिम एवं अन्य बनाम स्टेट ऑफ बिहार एवं अन्य, (2009) 8 एससीसी 751 में प्रकाशित

(iv). इन दिलीप कौर एवं अन्य बनाम जगनार सिंह एवं अन्य, (2009) 14 एससीसी 696 में प्रकाशित

5. इसके विपरीत, विद्वान लोक अभियोजक और प्रतिवादी शिकायतकर्ता के विद्वान वकील ने याचिकाकर्ता के वकील द्वारा प्रस्तुत किए गए तर्कों का कड़ा और कड़ा विरोध किया है। उनका कहना है कि आरोपी याचिकाकर्ता ने धोखाधड़ी से शिकायतकर्ता के धन का गबन किया और इस तरह शिकायतकर्ता के धन को हड़प लिया। शिकायतकर्ता के विद्वान वकील ने दलील दी कि याचिकाकर्ता को कई बार याद दिलाने के बावजूद, उसने न तो सामान दिया और न ही अग्रिम भुगतान वापस किया और उसके बाद, अंततः शिकायतकर्ता को एफआईआर दर्ज करानी पड़ी। विद्वान वकील का तर्क है कि याचिकाकर्ता का शुरू से ही भुगतान करने का कोई इरादा नहीं था और उसने शिकायतकर्ता के देय भुगतान हड़प लिए और इसे दीवानी विवाद का रंग देने के लिए, याचिकाकर्ता ने खातों में हेराफेरी की और झूठी प्रविष्टियाँ कीं। याचिकाकर्ता के वकील के इस तर्क के संबंध में कि यह विवाद एक सिविल विवाद है और इसलिए, आपराधिक कार्यवाही स्वीकार्य नहीं है, शिकायतकर्ता के विद्वान वकील का तर्क है कि इस प्रकार के सिविल प्रकृति के विवादों में भी, जब अनुबंध के उल्लंघन का आरोप होता है, यदि इसमें विश्वास भंग का कोई तत्व मौजूद है, तो यह आपराधिक अभियोजन को भी जन्म देता है और केवल इस आधार पर कि यह एक सिविल विवाद था, मामले में शामिल आपराधिकता को नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता। यह भी तर्क दिया गया है कि याचिकाकर्ता के खिलाफ मध्य प्रदेश

राज्य में भी समान और समान आरोपों वाली एक प्राथमिकी दर्ज की गई थी और याचिकाकर्ता ने मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय में एक विविध याचिका दायर की थी, जिसमें उसे कोई राहत नहीं दी गई थी।

6. उन्होंने प्रस्तुत किया कि माननीय सुप्रीम कोर्ट ने बार-बार चेतावनी दी है कि धारा 482 के अंतर्गत निहित शक्तियों का प्रयोग अत्यंत दुर्लभ मामलों में, अत्यंत संयम और सतर्कता के साथ ही किया जाना चाहिए। अतः, विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि यदि यह विविध याचिका स्वीकार कर ली जाती है एवं विवादित एफ.आई.आर. की कार्यवाही को रद्द कर दिया जाता है, तो इस प्रकार का कदम न्याय के हित में बाधा उत्पन्न करेगा और आरोपी को अपराध दोहराने के लिए प्रोत्साहित करेगा। उन्होंने निम्नलिखित निर्णयों पर विश्वास व्यक्त किया है:

- (i) गूगल इंडिया प्राइवेट लिमिटेड बनाम विसाखा इंडस्ट्रीज एवं अन्य, एआईआर 2020 एससी 350 में प्रकाशित;
- (ii) लक्ष्मण बनाम राज्य कर्नाटक एवं अन्य, 2019 (9) एससीसी 677 में प्रकाशित;
- (iii) राजेश बजाज बनाम राज्य दिल्ली, (1999) 3 एससीसी 259 में प्रकाशित;
- (iv) सनापरेडे महेधर शेषागिरि बनाम राज्य आंध्र प्रदेश, (2007) 13 एससीसी 165 में प्रकाशित।

7. मैंने बार में प्रस्तुत किए गए तर्कों को सुना और विचार किया है तथा रिकॉर्ड पर उपलब्ध सामग्री का अवलोकन किया है।

8. आरोपित एफआईआर के अवलोकन से एक तथ्य स्पष्ट रूप से स्थापित होता है कि याचिकाकर्ता और शिकायतकर्ता ने एक दीर्घकालिक अवधि के लिए आपसी रूप से

लाभकारी व्यापारिक संबंधों का आनंद लिया है। उनके संबंध को विश्वास, सहयोग और एक सफल व्यवसायिक उद्यम को बनाए रखने की साझा रुचि द्वारा चिह्नित किया गया है। रिकॉर्ड का अवलोकन स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि 2017 से 2022 के बीच याचिकाकर्ता और शिकायतकर्ता के बीच कई व्यापारिक लेन-देन हुए हैं। इस एफआईआर में शिकायतकर्ता ने आरोप लगाया है कि 29.09.2017 को उसने याचिकाकर्ता के पक्ष में क्रमशः ₹23,29,000/- तथा ₹25,00,000/- (कुल ₹48,29,000/-) की एडवांस राशि का भुगतान किया, परंतु न तो उसे माल की आपूर्ति की गई और न ही उसे मार्जिन मनी दी गई, क्योंकि आरोपी याचिकाकर्ता ने उसे धोखा देने की नीयत से जाली इनवॉयस बनाए थे, जबकि याचिकाकर्ता के पास कोई स्टॉक उपलब्ध नहीं था।

9. मेरी विचारशील राय में, जब शिकायतकर्ता पहले ही याचिकाकर्ता द्वारा उसके साथ किए गए धोखाधड़ी और छल की ऐसी शरारती घटना का अनुभव कर चुका था, तो यह प्रश्न उठता है कि उसने अगले पाँच-छः वर्षों तक याचिकाकर्ता के साथ अपने व्यापारिक लेन-देन क्यों जारी रखे।

10. इस तरह के दीर्घकालिक व्यावसायिक संबंधों का अस्तित्व, शिकायतकर्ता द्वारा याचिकाकर्ता के खिलाफ आपराधिक कार्यवाही शुरू करने के निर्णय की विश्वसनीयता और प्रेरणा पर सवाल उठाता है। उनके व्यावसायिक संबंधों के दौरान, किसी भी पक्ष द्वारा दूसरे के खिलाफ कोई पूर्व शिकायत या कानूनी कार्रवाई नहीं की गई है। किसी भी पूर्व कानूनी विवाद का न होना, उनके व्यावसायिक संबंधों की सामंजस्यपूर्ण प्रकृति को और रेखांकित करता है, जिससे आपराधिक आरोपों के अचानक उभरने पर संदेह होता है। दीर्घकालिक व्यावसायिक संबंधों वाले मामलों में, किसी एक पक्ष द्वारा अनुचित लाभ प्राप्त

करने या व्यक्तिगत बदला लेने के लिए आपराधिक न्याय प्रणाली का लाभ उठाना असामान्य नहीं है। इस विशेष मामले में, शिकायतकर्ता की फर्म की बैलेंस शीट से यह स्पष्ट है कि एफआईआर दर्ज होने से पहले, दोनों पक्षों द्वारा एक-दूसरे को माल की आपूर्ति के लिए कई ऑर्डर दिए गए थे, जो रिकॉर्ड में उपलब्ध सामग्री से स्पष्ट है।

11. ऐसी स्थितियों में जहाँ व्यावसायिक विवाद उत्पन्न होते हैं, भारतीय न्यायपालिका विवादों को सुलझाने के लिए एक मजबूत ढाँचा प्रदान करती है सिविल मुकदमेबाजी के माध्यम से। शिकायतकर्ता के पास हर्जाना, निषेधाज्ञा, या विशिष्ट निष्पादन जैसे सिविल उपायों की मांग करने या बकाया राशि की वसूली के लिए मुकदमा दायर करने का विकल्प होता है, जो वाणिज्यिक विवादों को सुलझाने के लिए आपराधिक अभियोजन का सहारा लेने के बजाय बेहतर हैं। यहाँ यह भी ध्यान देने योग्य है कि पक्षकार मध्यस्थ के माध्यम से व्यापार कर रहे थे और व्यावसायिक विवादों के संबंध में याचिकाकर्ता, शिकायतकर्ता और मध्यस्थ के बीच एक आपराधिक शिकायत ईओडब्ल्यू के समक्ष प्रस्तुत की गई थी और उसकी गहन जाँच की गई और अंततः यह पाया गया कि मूलतः पक्षों के बीच सिविल विवाद है। इसे तत्काल संदर्भ के लिए नीचे पुनः प्रस्तुत किया गया है:-

“से

श्री वर्धमान मेहता

ई/601, कामधेनु साई साक्षात

सेक्टर-6, खारघर,

नवी मुंबई - 410210

विषय : आपकी शिकायतें, जो सिमारा फूड्स प्राइवेट लिमिटेड और इसके निदेशक एवं मालिक के विरुद्ध प्रस्तुत की गई हैं।

संदर्भ : आर्थिक अपराध शाखा, मुंबई, प्राथमिक जांच संख्या 87/2022

आपके द्वारा ई.ओ.डब्ल्यू. मुंबई में सिमारा फूड्स प्राइवेट लिमिटेड एवं इसके निदेशक और मालिकों के खिलाफ प्रस्तुत किए गए आवेदनों के आधार पर, इस कार्यालय ने जांच संख्या 87/22 के तहत प्राथमिक जांच की।

इस कार्यालय द्वारा उपर्युक्त पी.ई. संख्या 87/22 की जांच के दौरान यह तथ्य सामने आया कि आपके कार्यालय द्वारा सिमारा फूड्स प्रा. लि. और इसके निदेशक एवं मालिकों के विरुद्ध दायर दावा और शिकायत “सिविल प्रकृति” की हैं।

अतः यह पी.ई. संख्या 87/22 इस कार्यालय द्वारा “सिविल प्रकृति” के रूप में दर्ज की गई है।

(XXX)

आर्थिक अपराध शाखा

यूनिट-VI (जी सी), मुंबई”

12. केवल यह तथ्य कि मध्य प्रदेश राज्य में याचिकाकर्ता के विरुद्ध समान और समरूप आरोपों के साथ एक एफआईआर भी दर्ज की गई थी, जिसमें माननीय मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा याचिकाकर्ता को कोई राहत नहीं दी गई थी, इस याचिका को प्रारंभिक चरण में ही खारिज करने का आधार नहीं हो सकता।

13. शिकायत का सावधानीपूर्वक अध्ययन, जिसका सार इस न्यायालय ने ऊपर उद्धृत किया है, यह दर्शाता है कि याचिकाकर्ता के विरुद्ध की गई किसी भी शिकायतित अपराध का कोई भी घटक सिद्ध नहीं होता। यहां तक कि यदि एफआईआर में उल्लेखित सभी कथनों को सत्य भी मान लिया जाए, तो भी वे याचिकाकर्ता के विरुद्ध आरोपित किसी भी अपराध का गठन नहीं करते। अतः, मुझे यह समझ में नहीं आता कि एफआईआर कैसे दर्ज की गई और अपराधों को सिद्ध कैसे मान लिया गया। जब एफआईआर स्वयं केवल एक व्यावसायिक संबंध के टूटने के तथ्यों के अलावा और कुछ नहीं बताती, तो केवल भारतीय दंड संहिता की भाषा जोड़कर अपनी शिकायत के दायरे का विस्तार करना प्रतिवादी संख्या 2 के लिए संभव नहीं है।

14. तर्कों और रिकॉर्ड पर उपलब्ध सामग्री के सावधानीपूर्वक विचार के पश्चात्, इस न्यायालय का मत है कि जब पक्षकारों के बीच पिछले पाँच वर्षों में किसी भी प्रकार की कोई शिकायत नहीं रही हो तथा उनके बीच दीर्घकालिक व्यापारिक संबंध रहे हों, तब आपराधिक अभियोजन की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए। एफआईआर से यह प्रतीत होता है कि पक्षकारों के बीच विवाद खातों के लेखा-जोखा के संबंध में है, क्योंकि शिकायतकर्ता की अपनी बैलेंस शीट से यह स्पष्ट है कि पिछले पाँच वर्षों में पक्षकारों के बीच अनेक लेन-देन हुए हैं। यह तथ्य स्वयं प्रतिवादी शिकायतकर्ता द्वारा याचिकाकर्ता को भेजी गई ईमेल (संलग्नक- आर-2/1) से प्रमाणित है। पक्षकारों के बीच हुई लेन-देन का सारांश त्वरित संदर्भ के लिए निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत किया गया है:-

एम/एस एग्री और सिमारा फूड्स प्राइवेट लिमिटेड (पूर्व में फर्टीनवेस्ट इंडिया प्राइवेट लिमिटेड के नाम से जाना जाता था) के बीच 1 जनवरी 2017 से 15 दिसंबर 2021 तक हुए लेन-देन का सारांश

लेन-देन का प्रकार	विवरण	राशि (₹)
भुगतान एवं बिक्री	एमएस एग्री द्वारा सिमारा फूड्स प्रा. लि. को अग्रिम/व्यापारिक भुगतान	76,778,252
	एमएस एग्री से सिमारा फूड्स प्रा. लि. को बिक्री	22,941,993
खरीद एवं भुगतान प्राप्ति	एमएस एग्री द्वारा सिमारा फूड्स प्रा. लि. से खरीद	(57,115,462)
	सिमारा फूड्स प्रा. लि. से एमएस एग्री को भुगतान प्राप्ति	(9,630,100)
डेबिट नोट एफ ई बी /2017-18-002	चने 5 एफसीएल की अंतिम निपटान शिपमेंट अवधि अक्टूबर-नवंबर 2017, बिक्री एमएस एग्री द्वारा सिमारा फूड्स प्राइवेट लिमिटेड के खाते में की गई	2,187,166
डेबिट नोट अगस्त/2019-20/001	अरहर दाल/तूर 10(5+5) एफसीएल की अंतिम निपटान जुलाई 2019 एवं 15-अगस्त-2019 में डिलीवरी के लिए, बिक्री एमएस एग्री द्वारा सिमारा फूड्स प्राइवेट लिमिटेड के खाते में की गई	937,200

डेबिट नोट 2020-21/001 एपीएन	तंजानिया कार्यक्रम/एपीएन के संबंध में अग्रिम फंडिंग की वसूली हेतु बकाया शुल्क	2,327,336
डेबिट नोट 2021-22/001 वीएनआर	तंजानिया कार्यक्रम/वीएनआर के संबंध में अग्रिम फंडिंग की वसूली हेतु बकाया शुल्क	2,479,943
डेबिट नोट 2019-20/002	एमएस एग्री द्वारा सिमारा फूड्स प्राइवेट लिमिटेड की ओर से थर्ड पार्टी पीपी बैग/ गोदाम/मजदूर/परिवहन आदि को किया गया भुगतान	81,904
डेबिट नोट फरवरी/2017- 18-003	एमएस एग्री द्वारा सिमारा फूड्स प्राइवेट लिमिटेड को ₹7,00,000 की अल्पकालिक अग्रिम पर ब्याज 15-जनवरी-2018 को अग्रिम दी गई एवं 19- जनवरी-2018 को पुनर्भुगतान प्राप्त हुआ	6,000
डेबिट नोट अप्रैल 21/2017- 18-001	सिमारा (फर्टइन्वेस्ट) पर ब्याज 01.04.2018 से 31.03.2019 तक	826,718
डेबिट नोट अप्रैल 21/2018- 19/003	सिमारा (फर्टइन्वेस्ट) पर ब्याज 01.04.2018 से 31.03.2019 तक	1,602,773
डेबिट नोट अप्रैल 21/2019- 20/003	सिमारा पर ब्याज 01.04.2019 से	1,718,285

	31.03.2020 तक	
डेबिट नोट अप्रैल 21/2020-21/003	सिमरा पर ब्याज 01.04.2020 से 31.03.2021 तक	1,908,323
डेबिट नोट अप्रैल 21/2021- 22/003	सिमरा पर ब्याज 01.04.2021 से 15.12.2021 तक	6,273,924.50
डेबिट नोट अप्रैल 21/2019- 20/004	रु. 9,37,200 डेबिट नोट नं. 2019-20/001 पर ब्याज 30.08.19 से 31.03.21 तक	267,102
डेबिट नोट अप्रैल 21/2017- 18/004	डेबिट नोट नं. 2017- 18/002 पर ब्याज 12.02.18 से 31.03.18 तक	50,930
डेबिट नोट अप्रैल 21/2017- 18/004 बी	डेबिट नोट नं. 2017- 18/002 पर ब्याज 01.04.18 से 31.03.21 तक	1,181,070
डेबिट नोट अप्रैल 21/2020-21/004	डेबिट नोट नं. 2020- 21/001 एपीएन पर ब्याज 09.02.21 से 31.03.21 तक	58,534
	अंतिम शेष राशि सिमारा फूड्स प्राइवेट लिमिटेड से प्राप्त हुई	54,881,893

15. दलीप कौर एवं अन्य। बनाम जगनार सिंह एवं अन्य, (2009) 14 एस सी सी 696 में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने धारा 482 दंड प्रक्रिया संहिता सीआरपीसी के

तहत क्षेत्राधिकार के प्रयोजन, दायरे और विस्तार से संबंधित पूर्ववर्ती मामलों पर विचार किया और निम्नलिखित निष्कर्ष निकाले:-

“10. इसलिए, उच्च न्यायालय को यह प्रश्न उठाना चाहिए था कि क्या अपीलकर्ता की ओर से किसी प्रकार की प्रलोभन की कार्रवाई दूसरी प्रतिवादी द्वारा उठाई गई है और क्या अपीलकर्ता का शुरू से ही धोखा देने का इरादा था। यदि पक्षकारों के बीच विवाद मुख्यतः एक सिविल विवाद था, जो अनुबंध के उल्लंघन से उत्पन्न हुआ था, जिसमें अपीलकर्ताओं द्वारा अग्रिम राशि वापस न करने से संबंधित था, तो वही धोखाधड़ी की अपराधिता नहीं मानी जाएगी। इसी प्रकार का विधिक स्थान विश्वासघात के अपराध के संबंध में भी है, जैसा कि भारतीय दंड संहिता की धारा 405 में दी गई परिभाषा को देखते हुए है। देखिए: अजय मित्रा बनाम मध्य प्रदेश राज्य, 2003 सीआरआईएलजे1249।

11. इसके अतिरिक्त, इसमें और कोई संदेह नहीं हो सकता कि उच्च न्यायालय अपनी स्वाभाविक क्षेत्राधिकार का प्रयोग तभी करेगा, जब कोई एक या अन्य विधि-सिद्धांत, जैसा कि आर. कल्याणी बनाम जनक सी. मेहता एवं अन्य, (2009)1 एससीसी516 में रखा गया है, लागू होता हो, जिनकी व्याख्या इस प्रकार है:

(1) आमतौर पर उच्च न्यायालय अपनी निहित क्षेत्राधिकार का प्रयोग करके किसी आपराधिक कार्यवाही को रद्द नहीं करेगा और विशेष रूप से, प्राथमिकी एफआईआर को भी नहीं, जब तक कि उसमें निहित आरोप, यद्यपि सतही तौर पर सही और संपूर्ण माने भी जाएं, कोई संज्ञेय अपराध प्रकट न करें।

(2) उपर्युक्त उद्देश्य के लिए, न्यायालय, सिवाय बहुत ही अपवादात्मक परिस्थितियों के, डिफेंस द्वारा प्रस्तुत किसी भी दस्तावेज़ पर विचार नहीं करेगा।

(3) इस शक्ति का प्रयोग बहुत ही संयम से किया जाना चाहिए। यदि एफआईआर में लगाए गए आरोप किसी अपराध के होने का खुलासा करते हैं, तो अदालत उससे आगे नहीं जाएगी और अभियुक्त के पक्ष में किसी भी प्रकार की आपराधिक प्रवृत्ति एक्टस रीउस के अभाव का आदेश पारित करेगी।

(4) यदि किसी आरोप में केवल सिविल विवाद प्रकट होता है, तो मात्र इसी आधार पर यह नहीं माना जा सकता कि आपराधिक कार्यवाही जारी रखने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए।

फिर, हीरा लाल एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य, 2009 सी आर आई एल जे 2849 में इस न्यायालय ने कहा:

12. संहिता की धारा 482 के तहत अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए उच्च न्यायालय द्वारा किसी आपराधिक कार्यवाही में हस्तक्षेप के मानदंड सर्वविदित हैं। ऐसा हस्तक्षेप अनुमेय होने के आधारों में से एक यह है कि शिकायत याचिका में निहित आरोपों को भले ही सटीक मान लिया जाए और पूरी तरह से सही मान लिया जाए, कि अपराध का खुलासा नहीं होता। उच्च न्यायालय तब भी हस्तक्षेप कर सकता है जब शिकायतकर्ता की ओर से की गई कार्रवाई दुर्भावनापूर्ण हो। हरमनप्रीत सिंह अहलूवालिया एवं अन्य बनाम पंजाब राज्य एवं अन्य 2009(7)एससीएलई 85 भी देखें।

16. हाल ही में सचिन गर्ग बनाम राज्य उत्तर प्रदेश एवं अन्य, **2024 (2) सुप्रीम 73**

में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निम्नलिखित निर्णय दिया गया है:-

14. अपीलकर्ता के नियोक्ता और प्रतिवादी संख्या 2 के बीच पूर्व व्यावसायिक संबंध स्वीकार किए जाते हैं। शिकायत याचिका से यह भी स्पष्ट होता है कि पक्षों के बीच विवाद उस दर को लेकर था जिस पर सौंपा गया कार्य किया जाना था। न तो शिकायतकर्ता की याचिका में और न ही दोनों गवाहों (जिसमें शिकायतकर्ता भी शामिल है) के प्रारंभिक बयान में, 1860 संहिता की धारा 405 के तहत अपराध के तत्व सामने आए। दर में परिवर्तन को लेकर ऐसे व्यावसायिक विवाद, 1860 संहिता की धारा 405 के तहत अपराध को जन्म नहीं दे सकते, जब तक कि इसके तत्वों की पुष्टि के लिए कोई गंभीर कारक मौजूद न हो। हमें ऐसा कोई भी तथ्य नहीं मिला जिससे प्रथम दृष्टया यह निष्कर्ष निकले कि प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा किए गए गैस आपूर्ति कार्य के संबंध में अपीलकर्ता के व्यक्तिगत उपयोग के लिए किसी सामग्री का बेईमानी से गबन या रूपांतरण किया गया था। उक्त कार्य नियमित व्यावसायिक लेनदेन के दौरान किया गया था। यह नहीं कहा जा सकता

कि विषयगत संपत्ति, जो कि घुली हुई एसिटिलीन गैस है और जिसे ईआईएल में बैटरी निर्माण के उद्देश्य से कारखाने को आपूर्ति की गई थी, का दुरुपयोग या रूपांतरण हुआ था। यह विवाद एक चालू वाणिज्यिक लेनदेन में प्रति इकाई दर में संशोधन से संबंधित है। शिकायत की याचिका और उसके समर्थन में दिए गए प्रारंभिक बयान से यह सामने आया है कि अभियुक्त अपीलकर्ता दर में बदलाव चाहता था और पूरा विवाद अपीलकर्ता के इसी रुख से उत्पन्न हुआ था। इन सामग्रियों के आधार पर यह नहीं कहा जा सकता कि धारा 405/406 के तहत अपराध के होने का सबूत मौजूद था। उच्च न्यायालय ने दलीप कौर (सुप्रा) मामले में तैयार किए गए परीक्षण को भी लागू नहीं किया। हमने उस निर्णय से संबंधित अंश पहले ही सुना दिया है।

17. इसी प्रकार का दृष्टिकोण व्यक्त करते हुए, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने परमजीत बत्रा बनाम राज्य उत्तराखंड, 2013 (11) एससीसी 673 के मामले में निम्न प्रकार निर्णय दिया है:-

“7. संहिता की धारा 482 के तहत अपना क्षेत्राधिकार इस्तेमाल करते समय उच्च न्यायालय को सतर्क रहना होगा। इस शक्ति का उपयोग बहुत संयमपूर्वक और केवल न्याय के उद्देश्यों की पूर्ति या फिर किसी भी न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने के लिए ही किया जाना चाहिए। क्या कोई शिकायत आपराधिक अपराध है या नहीं, यह आरोपित तथ्यों की प्रकृति पर निर्भर करता है। क्या आपराधिक अपराध के आवश्यक घटक विद्यमान हैं या नहीं, इसका निर्णय उच्च न्यायालय को करना होता है। कोई शिकायत जिसमें सिविल लेन-देन का उल्लेख हो, उसमें भी आपराधिक स्वरूप हो सकता है। लेकिन उच्च न्यायालय को देखना चाहिए कि क्या किसी विवाद, जो मूलतः सिविल प्रकृति का है, को आपराधिक अपराध का आवरण दिया गया है। ऐसी स्थिति में, यदि सिविल उपचार उपलब्ध है और, जैसा कि इस मामले में हुआ है, वास्तव में अपनाया गया है, तो उच्च न्यायालय को न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने के लिए आपराधिक कार्यवाही को रद्द करने में संकोच नहीं करना चाहिए।

8. जैसा कि पहले भी उल्लेख किया गया है, यहां विवाद मूलतः होटल व्यवसाय के लाभ और उसकी स्वामित्व से संबंधित है। लंबित सिविल वाद उन सभी पहलुओं का समाधान कर देगा। यह आरोप कि अपीलकर्ता द्वारा जाली और मनगढ़ंत दस्तावेजों का उपयोग किया गया है, उसी वाद में निपटाया जा सकता है। प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा अपीलकर्ता के विरुद्ध इसी प्रकार की शिकायत दायर करने का प्रयास असफल रहने पर, उसने वर्तमान शिकायत दायर की है। अपीलकर्ता को धारा 406 भारतीय दंड संहिता के अंतर्गत आरोपित अपराध वाले एक अन्य मामले में, जो प्रतिवादी संख्या 2 ने उसके विरुद्ध दायर किया था, बरी कर दिया गया है। संबंधित दुकान का कब्जा भी अपीलकर्ता द्वारा प्रतिवादी संख्या 2 को सौंप दिया गया है। ऐसी परिस्थिति में, हमारे विचार में, लंबित आपराधिक कार्यवाही को जारी रखना विधि की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा। उच्च न्यायालय का विपरीत मत रखना अनुचित था।”
18. इस स्तर पर यह देखा जाना आवश्यक है कि कई अवसरों पर इस न्यायालय ने यह पाया है कि आपराधिक कार्यवाही को धमकी के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। किसी पक्ष के विरुद्ध आपराधिक कार्यवाही का अर्थ है कि उन्हें पुलिस, न्यायालयी सुनवाई, प्रतिष्ठा की हानि, और अन्य प्रकार के दबावों से निपटना पड़ता है। अतः, ऐसी समस्याओं से बचने के लिए कई पक्षकार इस दबाव में आकर दूसरे पक्ष के सामने झुक जाते हैं और उनसे समझौता कर लेते हैं। यह एक ऐसा मुद्दा उठाता है जो भारत में काफी सामान्य है —सिविल विवादों का आपराधिककरण। यह भारतीय संदर्भ में बहुत आम है कि अनुबंध के उल्लंघन जैसे सिविल विवाद को धोखाधड़ी के आपराधिक अपराध की आड़ में प्रस्तुत किया जाता है।

19. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने बार-बार दोहराया है कि यह प्रवृत्ति न्यायपालिका और न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग करती है। मोहम्मद इब्राहिम एवं अन्य बनाम राज्य एवं बिहार अन्य, (2009) 8 एससीसी 751 में, सर्वोच्च न्यायालय ने कहा है:—

“इस न्यायालय ने बार-बार इस बढ़ती प्रवृत्ति पर ध्यान आकर्षित किया है जिसमें शिकायतकर्ता मूल रूप से सिविल प्रकृति वाले मामलों को आपराधिक अपराध का आवरण देने का प्रयास करते हैं, जाहिर तौर पर या तो अभियुक्त पर दबाव बनाने के लिए, या अभियुक्त के प्रति शत्रुता के कारण, या फिर अभियुक्त को परेशान करने के उद्देश्य से। आपराधिक न्यायालयों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि उनके समक्ष कार्यवाही का उपयोग बदला लेने या पक्षकारों को सिविल विवादों के निपटारे के लिए दबाव डालने के लिए न हो। साथ ही, यह भी उल्लेखनीय है कि कुछ सिविल प्रकृति के विवादों में आपराधिक अपराध के घटक भी हो सकते हैं और यदि ऐसा है तो ऐसे मामलों की सुनवाई आपराधिक अपराध के रूप में ही होगी, भले ही वे सिविल विवाद के भी समान हों।”

20. भारत आपराधिक कानून और नागरिक कानून के बीच अंतर करता है विभिन्न कानूनों, विभिन्न उपायों और विभिन्न दंडों के आधार पर। वाणिज्यिक विवादों का अपराधीकरण कानूनी व्यवस्था के लिए हानिकारक क्यों हो सकता है, इसके कई कारण हैं। वाणिज्यिक विवाद अक्सर जटिल मामले होते हैं जिनमें संविदात्मक समझौते, व्यावसायिक प्रथाएँ, और व्यापार कानूनों और नियमों की व्याख्याएँ शामिल होती हैं। आपराधिक अभियोजन के माध्यम से ऐसे विवादों का समाधान अत्यधिक कठोर दंड का कारण बन सकता है जो परिस्थितियों के अनुकूल नहीं हो सकता है। आपराधिक कानून (सार्वजनिक सुरक्षा और कल्याण को खतरा पहुँचाने वाले आचरण को दंडित करने के लिए बनाया गया) और वाणिज्यिक कानून (व्यावसायिक लेनदेन के निष्पक्ष आचरण को

नियंत्रित करने के लिए बनाया गया) के बीच स्पष्ट अंतर बनाए रखने से प्रत्येक कानूनी क्षेत्र की वैधता और उचित दायरे को बनाए रखने में मदद मिलती है।

21. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अतीत में इस प्रकार के मामलों से निपटने में अत्यंत कठोरता दिखाई है। हाल ही में, गोविंद प्रसाद केजरीवाल बनाम राज्य बिहार एवं अन्य, (2020) 16 एससीसी 714 में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यह राय दी कि इसमें कोई विवाद नहीं है कि मजिस्ट्रेट को धारा 202 दंड प्रक्रिया संहिता के तहत जांच करते समय व्यापक दृष्टिकोण अपनाना चाहिए और प्रथम दृष्टया मामला मानना चाहिए। हालांकि, धारा 202 सीआरपीसी के तहत जांच या पूछताछ करते समय, मजिस्ट्रेट को अनेक कारकों का संज्ञान लेना होता है, जिसमें यह भी शामिल है कि क्या प्रथम दृष्टया मामला बनता है या नहीं, क्या आरंभ की गई आपराधिक कार्यवाही विधि व्यवस्था का दुरुपयोग है या नहीं, क्या विवाद पूरी तरह सिविल प्रकृति का है या नहीं, तथा क्या सिविल विवाद को आपराधिक विवाद का रंग देने का प्रयास किया गया है या नहीं।

22. यहाँ तक कि जिन मामलों में खातों का विवरण एक महत्वपूर्ण कारक है, वहाँ भी आपराधिक उपचार पर सख्त प्रतिबंध होना चाहिए। यह एक ऐसी प्रक्रिया है जो व्यवसायों में काफी आम है, ऐसे वाणिज्यिक अपराधों को आपराधिक घोषित करने से न केवल अदालतों पर बोझ पड़ेगा, बल्कि कई व्यवसाय भी ठप हो जाएँगे। सीआरपीसी की धारा 482 यह सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है कि कोई भी दीवानी मामला आपराधिक मामलों में न बदल जाए। उच्च न्यायालयों की अंतर्निहित शक्ति उन्हें ऐसे किसी भी मामले को रद्द करने की अनुमति देती है जो दुर्भावनापूर्ण घटनाओं के कारण शुरू किए गए हों। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने हरियाणा राज्य एवं अन्य के प्रसिद्ध

मामले में। बनाम भजन लाल एवं अन्य, 1992 सप्प (1) एससीसी 335, में कहा गया है कि मामले को रद्द कर दिया जाना चाहिए "जहाँ आपराधिक कार्यवाही स्पष्ट रूप से दुर्भावना से की गई हो और/या जहाँ कार्यवाही दुर्भावनापूर्ण रूप से अभियुक्त पर बदला लेने के गुप्त उद्देश्य से और निजी एवं व्यक्तिगत द्वेष के कारण उसे परेशान करने के उद्देश्य से शुरू की गई हो।"

23. समय की मांग है कि न्यायिक व्यवस्था में तुच्छ आपराधिक मामलों का प्रवाह रोका जाए। इसके लिए, पुलिस को सलाह दी जानी चाहिए कि वह प्राथमिकी दर्ज करने से पहले मामले की प्रारंभिक जाँच करे। साथ ही, अधिवक्ता भी तुच्छ आपराधिक मुकदमेबाजी को रोकने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। एक अच्छे अधिवक्ता को व्यावसायिक मामलों के अपराधीकरण को कभी भी स्वीकार नहीं करना चाहिए। न्यायालयों को न्यायिक व्यवस्था का दुरुपयोग करने वालों के विरुद्ध कठोर दंड लगाना चाहिए। अंत में, नागरिकों का नागरिक उपचारों में विश्वास बहाल करना महत्वपूर्ण है। नागरिक विवादों के त्वरित समाधान, मध्यस्थ न्यायाधिकरणों के विकास आदि जैसे कदमों को बढ़ावा दिया जाना चाहिए।

24. आजकल, यह देखा गया है कि दीवानी अपराधों को आपराधिक अपराध में बदलने की प्रवृत्ति बढ़ रही है और लोग पुलिस की मदद से दीवानी या व्यावसायिक विवादों को निपटाने की कोशिश कर रहे हैं, जैसा कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने मोहम्मद इब्राहिम (सुप्रा) के मामले में देखा है। अब इस प्रथा/प्रवृत्ति की निंदा करने का समय आ गया है और इसके लिए वकीलों के साथ-साथ अदालतों को भी अधिक सतर्क रहने की आवश्यकता है। भारतीय न्यायपालिका में कार्यरत एक वकील के रूप में, उसका प्राथमिक

कर्तव्य अदालती कार्यवाही में अपने मुवक्किलों का प्रतिनिधित्व करना है। इसमें उनका मामला प्रस्तुत करना, उनकी ओर से बहस करना और उनके अधिकारों और हितों की रक्षा करना शामिल है। उसे अपने मुवक्किलों को विभिन्न मामलों पर कानूनी सलाह देनी चाहिए, जिसमें उनके अधिकार, दायित्व और उनके कार्यों के संभावित कानूनी परिणाम शामिल हैं। यह सलाह उसकी कानूनी विशेषज्ञता और संबंधित कानूनों के ज्ञान पर आधारित होनी चाहिए। साथ ही, उससे उच्च नैतिक मानकों और पेशेवर आचरण का पालन करने की भी अपेक्षा की जाती है। इसमें न्यायालय, विरोधी वकील और कानूनी कार्यवाही में शामिल सभी पक्षों के प्रति ईमानदार, मेहनती और सम्मानजनक होना शामिल है। कानून के शासन को बनाए रखना और न्याय को बढ़ावा देना उसकी मूल जिम्मेदारी है। इसमें सभी व्यक्तियों के साथ निष्पक्ष और समान व्यवहार की वकालत करना शामिल है, चाहे उनकी सामाजिक स्थिति कुछ भी हो, और यह सुनिश्चित करना कि कानूनी व्यवस्था में न्याय के सिद्धांतों का पालन किया जाए। भारतीय न्यायपालिका में सेवारत एक वकील के रूप में, न्याय के हितों को प्राथमिकता देना और पेशेवर नैतिकता के सिद्धांतों को बनाए रखना महत्वपूर्ण है। इसका अर्थ है कि एक वकील को अपने मुवक्किलों के निर्देशों का आँख मूँदकर पालन नहीं करना चाहिए, अगर वे अनैतिक, अवैध या न्याय के सिद्धांतों के विपरीत हों। वकीलों का कर्तव्य है कि वे अपने मुवक्किलों के सर्वोत्तम हित में कार्य करें, लेकिन यह कर्तव्य कुछ सीमाओं के अधीन है। अधिवक्ता अधिनियम, 1961 और बार काउंसिल ऑफ इंडिया के नियम नैतिक दिशानिर्देश निर्धारित करते हैं जिनका वकीलों को पालन करना चाहिए। ये दिशानिर्देश पेशेवर ईमानदारी बनाए रखने, न्याय को बढ़ावा देने और कानून के शासन को कायम रखने के

महत्व पर ज़ोर देते हैं। यदि किसी मुवक्किल के निर्देश इन नैतिक दिशानिर्देशों का उल्लंघन करते हैं या उनमें बेईमानी या अनैतिक व्यवहार शामिल हैं, तो अधिवक्ता का यह कर्तव्य है कि वह मुवक्किल को ऐसे कार्यों से बचने की सलाह दे। अधिवक्ताओं से अपेक्षा की जाती है कि वे अपने मुवक्किलों को ईमानदार और निष्पक्ष सलाह दें, भले ही वह मुवक्किल के वांछित परिणाम के अनुरूप न हो। इसके अलावा, एक अधिवक्ता का कर्तव्य न केवल अपने मुवक्किलों के प्रति, बल्कि न्यायालय और न्याय प्रशासन के प्रति भी होता है। अधिवक्ता न्यायालय के अधिकारी होते हैं और उनका यह दायित्व है कि वे न्यायालय को न्यायसंगत निर्णय लेने में सहायता करें। इस कर्तव्य के लिए उनसे अपेक्षा की जाती है कि वे तथ्यों और तर्कों को ईमानदारी से प्रस्तुत करें और न्यायालय को गुमराह करने से बचें।

25. संक्षिप्त में, एक अधिवक्ता को मुवक्किलों के निर्देशों का आँख मूंदकर पालन नहीं करना चाहिए, यदि वे अनैतिक, अवैध या न्याय के सिद्धांतों के विपरीत हों। अधिवक्ताओं का कर्तव्य है कि वे न्याय के हित में कार्य करें और विधिक पेशे द्वारा निर्धारित नैतिक मानकों का अनुपालन करें।

26. साथ ही, न्यायालयों को उन आपराधिक कार्यवाहियों को रद्द करने में संकोच नहीं करना चाहिए जो अनिवार्य रूप से दो पक्षों के बीच दीवानी या वाणिज्यिक विवादों से उत्पन्न होती हैं, जैसा कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने परमजीत बत्रा (सुप्रा) और दलीप कौर (सुप्रा) के मामले में कहा है। पुलिस थानों को वसूली एजेंट के रूप में काम करने या दीवानी विवादों को निपटाने के लिए आपराधिक जाँच की आड़ में मुकदमे के एक पक्ष पर दबाव बनाने की अनुमति नहीं दी जा सकती/नहीं दी जानी चाहिए।

27. अंत में, इस निर्णय का निष्कर्ष लिखने से पूर्व, यह न्यायालय सक्षम अधिवक्तागण श्री कपिल गुप्ता और श्री हेमंत नहटा द्वारा प्रदान की गई महत्वपूर्ण सहायता और लेखन प्रयासों की सराहना करता है।

28. उपर्युक्त चर्चा के मद्देनजर, यह न्यायालय सीआरपीसी की धारा 482 के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए, आक्षेपित प्राथमिकी और उससे उत्पन्न होने वाली अन्य सभी कार्यवाहियों को रद्द करने के लिए उपयुक्त मामला मानता है क्योंकि आक्षेपित प्राथमिकी की कार्यवाही जारी रखना कानून की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा। तदनुसार, पुलिस स्टेशन बनीपार्क जयपुर में दर्ज प्राथमिकी संख्या 239/2022 और उससे उत्पन्न होने वाली अन्य सभी कार्यवाहियाँ एतद्वारा रद्द की जाती हैं।

(अनिल कुमार उपमान), जे

गौतम जैन/

"अस्वीकरण- इस निर्णय का अनुवाद स्थानीय भाषा में किया जा रहा है, एवं इसका प्रयोग केवल पक्षकार इसको समझने के लिए उनकी भाषा में कर सकेंगे एवं यह किसी अन्य प्रयोजन में काम नहीं ली जायेगी। सभी अधिकारिक एवं व्यवहारिक उद्देश्यों के लिए उक्त निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही विश्वसनीय माना जायेगा एवं निष्पादन एवं क्रियान्वयन में भी उसी को उपयोग में लिया जायेगा।"



Tarun Mehra
Advocate